'पद्मावत' का 'प्रेम–पीर', जायसी की 'लोक–रीति' दृष्टि

डॉ.(श्रीमती) कल्पना तिवारी

प्राध्यापक, हिन्दी, विभाग, शास. वेंकट संस्कृत महाविद्यालय, रीवा, (म.प्र.) भारत

सारांश

साहित्य सृजन एक भावमूलक प्रक्रिया है, जिसमें समाज साहित्य और साहित्यकार माला में पिराये गये मोतियों के समान हैं। साहित्यकार के मस्तष्क एवं हृदय में एक ही साहित्य का जो रूप विधान स्थित रहता है वह देश काल से असम्पृक्त होकर स्थिर नहीं रह सकता। देश के अन्तर्गत लेखक का समाज आता है और काल के अन्तर्गत युग–धर्म आता है। समाज और युग धर्म की पहचान साहित्यकार में कूट–कूट कर भरी होती है। जायसी कृति पद्मावत की रचना–प्रक्रिया विधान में लोक तत्वों का समावेश कूट–कूट कर भरा है। भक्तिकाल की रचना प्रक्रिया में ऐतिहासिक विवेचन में इस बिन्दु का महत्व कुछ और भी बढ़ जाता है। वस्तुतः जायसी विलक्षण प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे, जिनकी रचनाओं में उनकी विलक्षणता लोक–रीति और वेद–रीति के सामंजस्य के रूप में व्यंजित है। आचार्य शुक्ल जैसे समीक्षक ने उनके काव्य में 'प्रेम की पीर' का समाधान लोकपक्ष और अध्यात्म पक्ष में द्वैत के अर्न्तसंबंधों को ध्यान में रख कर किया है। जायसी ने यह काव्य जन–धर्म की भाषा, भाव व रूप–शैली में प्रतिष्ठित कर अपनी जनवादी दृष्टि डालकर, पद्मावत को, युग अप्रतिम काव्य बना दिया।

सूफी के अनुसार साधना मार्ग की चारों अवस्थाओं (शरीयत, तरीकत, मारिफत और हकीकत) को जायसी स्पष्ट विवेचन करते हैं।

"नवौ खंड नव पौरी, औ तहँ बज्र केवार।

चारि बसेरे जो चढ़ै सत सौं उतरै पार।।"

यहाँ कवि का चार बसेरे से, चारों अवस्थाओं तथा सत से सात अवस्थाओं की ओर संकेत है।

सातों मुकामात रत्नसेन रूपी साधक के मार्ग में आये हैं साधना मार्ग की समस्त कठिनाईओं को रत्नसेन ने 'प्रेम की पीर' और 'लोक–रीति' की राह पर चलकर पार किया है।

"तुरकी अरबी हिन्दुई, भाषा जेति आहि।

जेहि महँ मारग प्रेमकर, सबै सराहैं ताहि।।"

मलिक मुहम्मद 'जायसी' का 'पद्मावत', प्रेमगाथा का परिपुष्ट ग्रन्थ है। जायसी प्रेम के कवि के रूप में विख्यात हैं। उनके अनुसार संसार में प्रेम से अधिक सुंदर और काम्य कुछ भी नहीं। उनकी कविता पाठक के मन में 'प्रेम की पीर' अवश्य पैदा करेगी।

"मुहम्मद कवि यह जोरि सुनावा।

सुना सो पीर प्रेम कर पावा।।"

लेखक या कवि इतिहास और कल्पना का भले ही सहारा ले लेकिन हमेशा वह युगीन तथ्यों को ही उजागर करता है और समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है। मध्यकाल जब विभिन्न झंझावतों से गुजर रहा था कवि हिन्दू–मुसलमानों के कट्टरपन को फटकार चुके थे किन्तु फिर भी इस झाड़ फटकार का प्रभाव अधिक अनुकूल न हुआ।

ऐसे समय में जायसी आदि सन्त 'प्रेम की पीर' की कहानियाँ लेकर साहित्य क्षेत्र में उतरे उन्होंने मुसलमान होकर हिन्दुओं की बोली में सम्पूर्ण सहृदयता से कहकर, उनके जीवन की मर्मस्पृर्शिनी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का सम्पूर्ण सामंजस्य दिखाया।

जायसी के पद्मावत में सिंहलदीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती का सौन्दर्य–वर्णन,

हीरामन तोते से सुनकर, चित्तौड़ , राजा रत्नसेन योगी बनकर उसकी प्राप्ति के लिये चल देता है। कठिन साधना के उपरान्त उसे राजकुमारी पद्मावती की प्राप्ति होती है। वह कुछ समय पद्मावती के साथ सिंहल में ही रहता है। इसी बीच में उसकी पहली रानी 'नागमती' विरह में अत्यंत व्यथित होती है। उसकी सुधि आते ही राजा रत्नसेन, पद्मावती सहित चित्तौड़ लौट जाते हैं। इसके पश्चात् आक्रांता अलाउद्दीन चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है, युद्ध में राजा रत्नसेन मारा जाता है और दोनों रानियाँ सती हो जाती हैं।

तात्कालीन विवरणों के साथ 'पद्मावत' में जायसी ने प्रेमोत्कर्ष का चित्रण लोक के आधार पर किया है।

''इस नवीन शैली की प्रेमगाथा का अविर्भाव इस बात के प्रमाणों में है कि इतिहास में किसी राजा के कार्य सदा लोक–वृत्ति के प्रतिबिम्ब नहीं हुआ करते। इस बात को ध्यान में रखकर कुछ नवीन पद्धति के इतिहासकार प्रकरणों का विभाग, राजाओं के राजत्वकाल के अनुसार न करके लोक के प्रगति के अनुसार करना चाहते हैं। एक ओर तो कट्टर अन्यायी सिकंदर लोधी मथुरा के मंदिरों को गिराकर मजिस्दें खड़ा कर रहा था, दूसरी ओर पूरब में बंगाल के शासक हुसैन शाह से जिसने 'सत्य की पीर' की कथा चलाई थी। कुतुबन मियाँ एक ऐसी कहानी लेकर जनता के सामने आये, जिसके द्वारा उन्होंने मुसलमान होते हुए भी मात्र मनुष्य होने का परिचय दिया। इस मनुष्यत्व को ऊपर करने में हिन्दूपन, मुसलमानपन, ईसाईपन आदि के स्वरूप का प्रतिरोध होता है, जो विरोध की ओर ले जाता है। हिन्दुओं और मुसलमानों को एक साथ रहते अब इतने दिन हो गये थे कि दोनों का ध्यान मनुष्यत्व के समान स्वरूप की ओर स्वभावतः जाय।''[1]

जायसी की कविता का आधार है लोक जीवन का व्यापक अनुभव। पद्मावत की भाषा, बनावट और मुहावरों में, लोक जीवन के अनुभवों की अनुगूँज से सब परिचित हैं। उसी अनुभव से जायसी को यह प्रेम–गाथा मिली है, जो पद्मावत की कथा बन गई है।

पद्मावती का लोक सिंहलदीप का लोक हैं। जिसको जायसी ने बड़े खूबी से रेखांकित किया है। जायसी ने पशु–पक्षी, जड़–जंगम को भी व्यापकता प्रदान की है–

बसहिं पांखि बोलहि बहु भाखा।
करहिं हुलास देखि के साखा।।
भोर होत बोलहिं चुहचुटी।
बोलहिं पांडुक 'एकै तूही''।
सारौं सुआ जो रहचह करहीं।

× × × ×

कुट्ट–कुट्ट करि कोइल राखा।
औ भृंगराज बोल बहु भाषा।।
कुहुकहिं मोर सुहावन लागा।
होइ को राहर बोलहिं कागा।।
आवत पंछी जगत के भरि बैठे अमराऊ।
अपनि–अपनि भाखा, लेहिं पई कर नाऊँ।।

वस्तुतः जायसी विशिष्ट विलक्षण प्रतिभा के अधीन व्यक्ति थे, जिनकी दो रचनाओं में उनकी विलक्षणता, लोकरीति और वेदरीति के सामंजस्य के रूप में व्यंजित है। आचार्य शुक्ल जैसे समीक्षकों ने उनके काव्य में 'प्रेम की पीर' का अभिधान लोकपक्ष और अध्यात्म पक्ष में द्वैत के अंतर्संबंधों को ध्यान में रखकर किया है– *''जिसके पढ़ने से यह प्रकट हो जाता है कि जायसी का हृदय कैसा कोमल और 'प्रेम की पीर' से भरा हुआ था, क्या लोकपक्ष में, क्या*

अध्यात्म पक्ष में, दोनों ओर उसकी गूढ़ता, गंभीरता और सरसता विलक्षण दिखाई देती है।"[2]

पद्मावत, जायसी का प्रेम महाकाव्य है। पद्मावती और रत्नसेन का रूपक रचकर, उन्होंने विश्वव्यापी पार्थिव और अपार्थिव सौन्दर्य की कथावस्तु रची है। यह कथावस्तु जायसी की नहीं, भारत की ही नहीं वरन् समस्त विश्व के हृदयस्थल की है।

पद्मिनी, जायसी के महाकाव्य पद्मावत की नायिका और उनके सूफी काव्य धर्मानुसार ब्रह्म की लौकिक प्रतीक है। उसके सौन्दर्य–वर्णन के माध्यम से उन्होंने उस चिरतंन महाज्योति के अपरिमित सौन्दर्य का वर्णन किया है। वस्तुतः रूप सौन्दर्य वर्णन ही पद्मावत का मूलाधार है–

"नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर सरीर।

हंसत जो देखा भा, दसन ज्योति नग हीर"।।

जायसी ने पद्मावती के सौन्दर्य–वर्णन में, विश्वव्यापी सौन्दर्य झाँकी दिखाई है–

"बरुनी का बरनौ इमि बनी। साधै खान आन दुइअनी।।"

सिंहलदीप की राजकुमारी पद्मावती के सौन्दर्य का चित्रण खुदा के नूर के रूप में करते हैं–

"पारस ज्योति लिलाटहिं ओती। दृष्टि जो करै होय तेहि जोती।"

अलाउद्दीन जैसे अधम पात्र को भी दर्पण द्वारा उस पारस रूप का प्रतिभास हो जाता है–

"बिहंसि झरोखे आइ सरेखी। निरखि साह दरपन महं देखी।

होतहिं दरस परत भा लोना। धरती सरग भएउ सब सोना।।"

इस प्रकार जायसी पहले तो सौन्दर्य के साक्षात्कार से, हृदय के उस आनंद सम्मोह का दर्शन करते हैं जो मूर्च्छा की दशा तक पहुँचा हुआ जान पड़ता है।

"सुनतहिं राजा गा मुरझाई। जानहु लहर सुरज कै आई।।

प्रेम घाव–दुख जान न कोई। जेहिं लागै जानै तें सोई।।

सुआ हीरामन, राजा रत्नसेन की गम्भीर आसक्ति का विशद वर्णन करता है। रत्नसेन की अनुरक्ति और उसके संकटो का विवरण सुन, पद्मावती का हृदय द्रवीभूत हो उठता है–

"सुनि कै विरह चिनगि ओहि परी। रतन पाव जौ कंचन करी।

हीरामन जौ कही रस बाता। सुनि कै रतन पदारथ राता।।"

वस्तुतः इस ग्रन्थ में सुआ पक्षी न होता तो रत्नसेन के हृदय में, प्रेम का प्रारंभ ही न होता–

"गुरु सुआ जेहिं पंथ देखावा, बिन गुरु को निरगुन पावा।"

रत्नसेन की प्रथम परिणीता श्यामांगी नागमती विरह–वर्णन, पद्मावत का प्राण–बिन्दु है। जायसी का भावुक हृदय इस भारतीय हिन्दू रमणी के पवित्र आँसुओं में डूबकर अपनी सुध–बुध खो बैठा है–

"नागमती चितउत पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्हि न फेरा।"

विरह व्यथता रानी को, विलास–सज्जा के प्रति रंचमात्र भी आकर्षण न रह गया था, वह एक स्त्री और साधारण नारी की तरह अपने प्रिय वियोग में तड़प रही है–

"पिउ वियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा नित बोले पिउ–पिऊ।"

नागमती का प्रियतम् नहीं लौटा, जग को सुखदायक लगने वाले पावस उसके लिए बाण बन गए–

"खड्ग बीजु चहुँ ओरा। बुन्द बान बरसहिं घनघोरा।"

विकल नागमती कातर स्वरों में पति को पुकार–पुकार उससे विनय करने लगी–

"कन्त उबारू मदन हौं घेरीं।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है– *"जायसी की स्त्री जाति की या कम से कम हिन्दू गृहिणी मात्र की सामान्य स्थिति के भीतर विप्रलंभ श्रृंगार के अत्यन्त समुज्ज्वल रूप का विभास दिखाया है।"*[3]

जायसी की दृष्टि में मानव–जीवन का सच्चा मार्गदर्शक प्रेम है, धार्मिक कट्टरता नहीं। पद्मावत में पद्मावती को पाने की इच्छा राजा रत्नसेन के मन में है और आक्रांता अलाउद्दीन के मन में भी। रत्नसेन सत्ता और शक्ति को पीछे छोड़कर केवल प्रेम के सहारे रानी पद्मिनी को पाने का प्रयत्न करता है और सफल होता है। सत्ता, शक्ति और धार्मिक उन्माद के बावजूद, प्रेम के अभाव में अलाउद्दीन को पद्मिनी नहीं मिली, सिर्फ चिता की राख मिली और उस राख को ढँककर झूठी पड़ी पृथ्वी पर व्यर्थता की जीत हाथ लगी।

जायसी की दृष्टि में अलाउद्दीन की चाह मृगतृष्णा है जिसका अन्त यही होता है–

"जौ ताहि ऊपर छार न परै। तो लहि यह तिस्ना नहिं मरै।।"

भक्तिकाल के कवियों ने, पहले से चली आती धार्मिक भाषा के बदले लोक जीवन की भाषा को विकसित किया। यही प्रयत्न जायसी काव्य में भी है। जायसी की विश्वदृष्टि का सूफी स्वभाव उनकी कविदृष्टि को लोक–जीवन के करीब ले जाता है, क्योंकि सूफीमत मूलतः लोकधर्म है। आरम्भ से ही सूफी कवियों ने लोक प्रचलित प्रेम–कथाओं को काव्य रचना का आधार बनाया और अपने क्षेत्र की बोली में कविता लिखी। जन–संस्कृति के विकास की दृष्टि में, सूफी कवियों का यह योगदान अविस्मरणीय है।

संदर्भ ग्रन्थ –

1. पद्मावत – मलिक मुहम्मद जायसीकृत सम्पूर्ण।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृ. 100
3. त्रिवेणी – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृ. 23

RESEARCH CHRONICLER